ADVERTISEMENT

'उसने कहा था' प्रथम विश्वयुद्ध के तुरंत बाद लिखी गई थी. तुरंत घटे को कहानी में लाना उसके यथार्थ को इतनी जल्दी और इतनी बारीकी से पकड़ पाना आसान नहीं होता पर गुलेरी जी ने यह किया और खूब किया. इस कहानी में प्रेम से भी ज्यादा युद्ध का वर्णन और माहौल है. यह बताने की खातिर कि युद्ध हमेशा प्रेम को लीलता और नष्ट करता है. लहना सिंह का एक छोटा-सा सपना है, नदी के किनारे अपने गांव में, आम के पेड़ के तले भाई की गोद में मरने का. पर वह मरता है एक अनजान देश में. अपनी प्रेमिका के वचन की रक्षा करते हुए. वह सूबेदारनी के सुहाग और बच्चे को तो बचा लेता है पर अपनी बीवी और बच्चे को अनाथ कर जाता है.

अब बात चरित्रों की. लहना का चरित्र एक ऐसा विशिष्ट चरित्र है जिसमें कई सारी खूबियां और नायकत्व कूट-कूटकर भरा गया है. वह अपने भाई को बहुत चाहता है. देश को अगाध प्रेम करता है. बेटे से जिसे बहुत लगाव है. गांव जिसकी रगों में दौड़ता है और प्रेम तो उसके लिए जिंदगी के हर द्वन्द और दुविधाओं से भी बहुत ऊपर जीवन-मृत्यु का सबब है. सिर्फ 12 वर्ष की छोटी-सी उम्र में वह उस नन्ही बालिका (बाद की सूबेदारनी) को बचाने की खातिर अपनी जान से खेल जाता है. और 37 साल की उम्र में अपने परिवार और सपनों की परवाह न करते हुए उसको दिए वचन की रक्षा के लिए उसके घायल बेटे को उसके पति के साथ घर भेजकर, खुद के लिए मृत्यु चुन लेता है. और तो और वह जर्मन सैनिक को अपनी बातों में लाकर और फंसाकर मार भी देता है. यानी वो बुद्धिमान भी है.

इस कहानी के प्रसिद्ध होने का एक कारण यह भी है कि हर स्त्री कहीं-न-कहीं मन में ऐसा ही प्रेमी चाहती है. और हर पुरुष की कल्पना में अपने प्रेम के दिनों का ऐसा ही रूप होता है. लेखक ने नायकों के तमाम गुणों को मिलाकर, उन्हें ठूंस-भरकर लहना सिंह को रचा है. उसके चरित्र के हर पक्ष कर्तव्य, प्रेम और देशप्रेम के तीन बिंदुओं के बीच बड़ी सहज भाषा में रच जाते हैं.

ढेर सारे किरदारों के बावजूद इस कहानी में तीन ही मुख्य किरदार हैं. लहना सिंह, सूबेदारनी और फिर वजीर सिंह. बोधा बच्चा है. सूबेदार पुत्र मोह में कमजोर. सो बेटे को लेकर रणभूमि से घर लौट जाता है. हालांकि लहना की भी एक पत्नी है पर उसका कोई जिक्र यह कहानी नहीं करती. लहना के मरते वक़्त भी वह उसकी स्मृतियों में नहीं आती, आती है तो अमृतसर की गलियों वाली वह बच्ची. वह पत्नी के गोद में मरने की बात भी नहीं करता, भाई की गोद में मरना चाहता है. जाहिर है लेखक ने ऐसा लहना के उस बच्ची के लिए प्रेम को बताने के लिए ही किया है नहीं तो इस तरह उसका चरित्र कमजोर हो जाता. लहना और सूबेदारनी का वह अमरप्रेम फिर शायद उस तरह अमर न हो पाता. तीन के बाद जो भी चरित्र हैं वे वक्त-जरूरत नायक-नायिका के चरित्र को रचने और उभारने के लिए हैं.

ADVERTISEMENT

Scanned by CamScanner

मोटे तौर पर देखें तो तीन विशेषताएं हैं जो 'उसने कहा था' को कालजयी और अमर बनाने में अपनी-अपनी तरह से योगदान देती हैं. इसका शीर्षक, फलक और चरित्रों का गठन. यह न तो 'बुद्धू का कांटा' और 'सुखमय जीवन' की तरह अपने शीर्षक में अपनी कहानी बता देने वाली कहानियों में से थी, न ही उस समय लिखी जानेवाली तमाम अन्य कहानियों के शीर्षक की तरह सीधी-सपाट. इसके नाम के साथ ही इसे जानने-समझने का रोमांच भरने वाला रहस्य जुड़ा हुआ था. शीर्षक सीधे-सीधे पाठकों को खींचता है और उनसे पुकारकर कहता है कि पढ़ो, किसने कहा था? किससे कहा था? क्यों कहा था? क्या कहा था?

पढेंगे तभी तो पता चलेगा कि सूबेदारनी ने लहना सिंह से कहा था कि मेरे पति और बेटे की रक्षा करना और जो उसने अपनी जान की बाजी लगाकर की भी. अब सवाल उठता है कि कोई किसी से कुछ ऐसे ही तो नहीं कह देता. बिना किसी भरोसे के, रिश्ते और संबंध के ऐसी बात कहां होती है भला? न सामनेवाला इतनी आसानी से मान लेता है. संबंध है तो बस इतना कि 23 बरस पहले वे अमृतसर के बाजारों में कहीं मिले थे. लड़के ने खुद तांगे के पहिए के नीचे होकर भी लड़की की जान बचाई थी. लड़का, लड़की से रोज पूछता था, 'तेरी कुड़माई हो गई? लड़की रोज शर्माती थी पर एक दिन उसने कह दिया था हो गई.

ADVERTISEMENT

'उसने कहा था' प्रथम विश्वयुद्ध के तुरंत बाद लिखी गई थी. तुरंत घटे को कहानी में लाना उसके यथार्थ को इतनी जल्दी और इतनी बारीकी से पकड़ पाना आसान नहीं होता पर गुलेरी जी ने यह किया और खूब किया.

और तब उसने एक लड़के को मोरी में धकेल दिया था, एक कुत्ते को पत्थर मारा और एक वैष्णवी से टकराकर अंधे की उपाधि भी पाई थी. 12 साल के उस बच्चे की मनःस्थिति के बाद कहानी बीच के अंतराल को खाली छोड़ते हुए सीधे 25 साल आगे आती है. यह बिन बताए कि फिर क्या हुआ था. यहां चाहें तो आप कहानी में अपनी कल्पना से रंग भर लें, उन कुछ सूत्रों के आधार पर जो कहानी में यहां-वहां बिखरे हुए हैं.

वहां से यह कहानी युद्ध के मैदान तक एक लंबी छलांग लगाती है. यह समयांतर कहानी के फलक को काफी बड़ा बना देता है जो इस कहानी और लेखक को अमर बनाने वाला एक और तत्व है. युद्ध और प्रेम इस कहानी के दो कोण है या दो सिरे. यहां कहानी अमृतसर की गलियों की उस घटना के बाद सीधे प्रथम विश्वयुद्ध के मोर्चे पर पहुंचती है. वहां के भारतीय सैनिकों, उनकी चुहलबाजियों, अपने वतन की याद और स्मृतियों के बीच.

पांच खण्डों में और 25 वर्षों के लंबे अंतराल को खुद में समेटती यह कहानी विषय और अपने अद्भुत वर्णन में किसी उपन्यास की सी है. प्रेम, कर्तव्य और देशप्रेम के तीन मूल उद्देश्यों से जुड़ती, उसे अपना विषय बनाती हुई. कहीं भी अपने विषय से न भटकते हुए, न इधर-उधर होते हुए. शाब्दिक विवरणों से ज्यादा मनोविज्ञान को पढ़ते, पकड़ने और उसके चित्रण में रमती हुई. सोचकर देखें तो प्रेम, कर्तव्य और देशप्रेम एक ही सिक्के के अलग-अलग पहलू हैं और सबके मूल में प्रेम ही है. कर्तव्य भी तो प्रेम का ही एक रूप होता है और देशप्रेम भी तो बड़े और वृहद् अर्थों में प्रेम है इसलिए यह कहानी हर अर्थ में प्रेम कहानी है.

Scanned by CamScanner

वजीर सिंह ऐसा किरदार है जो लड़ाई के मैदान में भी हंसी-मजाक करता हुआ, प्रेम के गीत गाता हुआ दिखता है. वह नायक के आसपास विदूषक (कॉमेडियन) या सहनायक के चरित्र जैसी भूमिका में है. लेकिन उसके महत्व को कम करके नहीं आंका जा सकता है. ऐसे सहयोगी चरित्र बहुत ही महत्वपूर्ण और बहुतेरे उद्देश्यों पूरे करते हैं. जैसे इस कहानी में नायक अपना वचन पूरा कर जाने के संदेश का संदेशवाहक आखिरकार उसे ही बनाता है.

अब बात सूबेदारनी की. बार-बार बचपन में मिल जानेवाली और बाद में एक बार मिलनेवाली यह नायिका नायक से बस तीन शब्द कहती है. इसमें बारंबार कहा जानेवाला है 'धत्त' ...(जो इस कहानी का बहुत ही लोकप्रिय और प्यारा शब्द है. इसे 'तीसरी कसम' फिल्म के हीरामन के 'इस्स' से भी जोड़कर देखा जा सकता है. शायद 'धत्त' ही प्रेरणा रहा हो इस 'इस्स' की.) 'धत्त' भी जैसे एक चरित्र है इस कहानी का. नायिका के अल्हड़पन, मासूमियत, झिझक और शर्म को एक साथ बताता हुआ.

दूसरी बार 'हां हो गई, देखते नहीं यह रंगीन शालू' और तीसरी बार उस पुराने परिचय और संबंध को याद दिलाते हुए लहना सिंह से अपने पति और पुत्र की जान बचाने की भीख मांगना. संकोच और शर्माना, तब की नायिका की तमाम खूबियों के साथ ये दोनों महत्वपूर्ण खूबियां भी हैं इस स्त्री चरित्र में.

यह संयोग नहीं कि जब 'बालिका वधू' जैसा चर्चित धारावाहिक रचा गया तो उसकी नायिका की प्रारम्भिक उम्र आठ साल ही दिखाई गई. लेखक के दिमाग में तब कहीं सूबेदारनी का बचपन जरूर अटका होगा. आनंदी की गहनों कपड़ों को लेकर खुशी में कहीं हम उस अनाम बालिका यानी सूबेदारनी का अक्स भी देख सकते हैं. यह चेहरा एक मां का है और एक पत्नी का भी. आज की स्त्री होती तो यह नहीं भी कहती. प्रेमी को पाकर इतने बरस बाद भी पति का जीवन शायद उसे इतना महत्वपूर्ण न भी लगता.

ADVERTISEMENT

पर आदर्शों के सांचे में ढली इस कहानी में ऐसा नहीं होता. निश्छलता, परिवार की खातिर जीना-मरना. बिना किसी नाम की इस पारंपरिक नायिका की छवि एक ही मामले में आधुनिक है. वह प्रेमी को सामने पाकर अपना परिचय नहीं छुपाती और न ही चुप रहती है. यह आधुनिकताबोध तो है कुछ अर्थों में पर इसमें भी आधुनिकता से ज्यादा मतलब की गंध है.

कहानी की भाषा बिलकुल बोलचाल की भाषा है जो वातावरण को सजीव कर देती है. पंजाबी के न जाने कितने शब्दों का प्रयोग इसे अलग बनाता है और 101 बरस पुरानी कहानी के हिसाब से तो काफी प्रयोगशील और प्रगतिशील भी. इस कहानी का विषय भी बहुत प्रयोगधर्मी है. इतने बरस पूर्व एक प्रेम-कहानी को रचना, वह भी इस आत्मीयता और लगाव से, रचनाकार के लिए कैसा अनुभव रहा होगा यह बात सोचने और समझने की ही ठहरी.

Scanned by CamScanner